शोध संचयन
A Refereed Research Journal
And a complete Periodical dedicated to
Humanities & Social Science Research
ISSN 0975 1254 (PRINT)
ISSN 2249-9180 (ONLINE)
www.shodh.net
Vol. 13
Issue 1&2
15 July 2022

शक्ति काव्य समीक्षात्मक अध्ययन

बीज शब्द :

यद्यपि शक्ति काव्यों की सृजन प्रक्रिया का मुख्य आधार कवि का भक्ति भाव ही रहा है। तदपि शक्ति काव्यों की साहित्यिकता में किसी प्रकार की बाधा नही पड़ी है। प्रत्येक शक्ति काव्य, भाषा अलंकार, छन्द योजना, इस योजना आदि की कसौटी पर खरा ही उतरेगा। कालावधि के तादात्म्य से शक्ति काव्यों की भाव परिधि और कला परिधि में भले ही शिल्पगत अन्दर आ गये हो लेकिन विचार और धारणगत शक्ति काव्य एक ही मूल स्वर से जुड़े हैं वह है- पराशक्ति का महिमा बखान, मातृशक्ति का गौरव गायन, आधा शक्ति के प्रति प्रणति निवेदन, दैन्य भाव ही प्रधानता, भक्ति परक संवृष्टि, प्रकृति प्रदत्त विविध उपादानों का चित्रण आदि।

*****

डॉ० जयवीर सिंह
अध्यक्ष हिन्दी विभाग,
आर0एम0पी0 पी0जी0 कालेज
सीतापुर

शक्ति काव्य समीक्षात्मक अध्ययन

भाव चित्रण

1. पराशक्ति का महिमा बखान- कविवर विश्वनाथ पाठक 'सर्वमंगला' में मंगलचरण करते हुए कहते हैं -

'रवि-ससि-अम्बर-अवनी-विहीन।
भा महासुप्ति माँ जग विलीन।
तब पुरुष-नाभि-पंकज मझार।
उपजा विरंचि जग-सृजन हार॥
ओंका लीलैं को असुर घोर।
धाये मधु अउ कैटभ बरोर॥
विधि अपुना को असहाय जानि।
सुमिरिसि देवी का जोर पॉय।
जयजय जय सक्ति अनादि अम्ब।
जय ब्रह्म स्वरूपिर्पण निरालम्ब॥
जय जय बहुरूपिणि एक रूप।
जय जय जय भ्य भंजनि अनूप।[1]
और उसी को अर्पित यह छन्द- तोरे कोंछें मैं महामन्द
दुई ठूँ पूजा कै धरउ छन्द।'[2]

माँ की सौन्दर्य शक्ति का स्तवन कवि इन शब्दों में कहता है

'रूप कवन बरनौ रानी कै तन कपूर अस गोर।
खड़ी होय जो अन्हियारे माँ, तो हवै जाय अजोर॥
बारन कै बेनी बान्हपै, होय सिखी कै कुटि।
भूकुटी लखै काम कै धानुहाँ, परै हाथ सै छूटि॥'[3]

देवी तीनों लोकों की रक्षा हेतु प्रकट हुई है-

'तीन लोक रक्षा करन, गौरी तन प्रकटी यथा,
तुमतें ही बरनन करौ, मम मुखते सुनु अब कथा।'[4]

महाशक्ति के तेज का प्रसार तीनों लोको में परिव्याप्त है

'तासन प्रकट भई एक नारी,
तीन हुऐ लोक व्याप्त घुति भारी।
मुख भो तुरतहि तेज महेशा,
यम के तेज भयो सिर केशा,
विष्णु तेज सो भुजा विसाला
कुच-शशि तेज भयो त्तकाला।'[5]

कविवर गुप्त जी ने आधा शक्ति के तेजोरूप का वर्णन करते हैं।

'निकला तब उसकेतन से तेज एक अकलंक,
ब्रह्म, रूद्र, इन्द्रादि सुरों के तनु से भी त्तकाल
निकले ज्योतिः पुँज और सब,
मिले उसी में हाल।'[6]

2. **महाशक्ति का गौरव गायन :** महाशक्ति की गौरव गाथा का आख्यान कवियों ने अपनी-अपनी दृष्टि से प्रस्तुत किया है-

'कैसा भीषण? कैसा सुन्दर था देवी का रूप।
इधर अमृत की चारू चन्द्रिका, उधर प्रलय की धूप।'[7]

महाशक्ति लीलाकारिणी है-

'चेतन तोप तरंग सी वैकारिकी सुभाय।
लीला कारा प्रकृति सो चारू चपल चित चाय।'
सहजा सहज रूप की सीता अमिधा उदार।
ता माया वैकारिकी राजि ईहा कार॥'[8]

शक्ति-शक्तिमान की अभिन्नता को व्यक्त करते हुए कवि-वासदेव शास्त्री का कथन है -

'शक्ति की प्रतीत शक्ति मान से पृथक् नही,
शक्ति बिना शक्तिमान कथन बने नहीं।
ब्रह्म बिना कहाँ रहे आश्रय रहित शक्ति।
शक्ति बिना ब्रह्म की प्रतीति बनै नहीं।
शक्ति की उपासना ही ब्रह्म की उपासना है।
यह बात युक्ति युक्त सर्वथा टले नहीं।'[9]

3. **आधा शक्ति के प्रति प्रणति निवेदन-** प्रायः प्रत्येक शब्द काव्य में शक्ति के प्रति प्रगति का भाव प्रमुख रूप से मुखर हुआ है। कवि माँ पराम्बा अनुकम्पा की अनुकम्पा का आकांक्षी है-

'जो भी तू है पर या अपरा,
यह तू है या वह अभिराम।
तुझको तेरे शिशु अबोध का,
देवि देवि!! शत-शत कोटि प्रणाम।'[10]

रेवी रक्षिका शक्ति है-

'देवी निखिल लोक रक्षिका सदैव तू ही,
सर्व सुख दायिका निगूढ करूणा झरी।
मदन कदन प्रेयासी सुख रासि तू ही,
त्रिगुण मरीय सी कवीन्द्र हृदय चरी।'[11]

अजेय आधा शक्ति के प्रति भाव व्यक्त करते हुए-

'सत् हो किवां असत् चर-अचर जो कुछ भी संवेद्य,
सब की शक्ति सार है संस्तव, कैसे हो अनवद्य।'[12]

4. **दैन्य-भाव का प्रकटीकरण-** आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी माँ की महिमा को व्यक्त करते हुए भाव विह्वल हो कह उठते हैं -

'ब्रह्मा, महेन्द्र, निधि नायक, नीर नाथा,
सानंद जासु गुण, गावत जोरि हाथा।

सत्कीर्ति तासु यह पामर ज्ञान हीना,
हा! हा! कहे किमि महामति मंद दीना।'[13]
'तै तिरगुन कै मोह पाय मा तिनि लोक लै बान्हें।
अम्बर ह्वैकै तेय लरिकन कै, धारे सीस पै छाता।।
धरती ह्वैकै सबका ढोवै तोरि जय होय माता।
तोरे बिना कुटील खल दल कों, के चढ़ि सिंह अंगोछे।।
सहतारी का छाड़ि पूत कै, आँसु, अउर को पोछै।।
बदन निहारू प्रनत भगतन कै, हे त्रिभुवन कै माता।
कुछु सनेह जब माँ सीतल करू, जुगुल नयन रिसिराता।।'[14]

5. **आह्वान परक भाव**- शक्ति काव्यों में पराशक्ति के प्रति आह्वान का भाव रहा है। विपत्ति विदारिणि अदृश्या शक्ति को आमन्त्रण कवियों ने अनेक बार दिया है। कवि शत्रु-नाश हित आधा शक्ति का आह्वान इन शब्दों में करता है -

'पार्वती पति बन्दिनी-नन्द नंदिनी रूप,
शत्रु नाशि जय देउ यश, दीजै रूप अनूप।'
निज प्रचण्ड भुज दण्ड से, नष्ट करीदनु गर्व,
जय दै यश दै, रूप दै, शत्रु विनाशहु सर्व।'[15]

6. **रस अभिव्यंजना**- भारतीय आचार्यों ने काव्य के भाव पक्ष पर अधिक बल दिया है। आचार्य राजशेखर ने काव्य पुरुष की कल्पना करते हुए शब्द और अर्थ को उसका शरीर तथा रस को आत्मा बताया है। साहित्य दर्पण में रीति गुण अलंकार आदि को रसात्मक वाक्य रूप काव्य को उत्कृष्टता प्रदान करने वाला कहा गया है। यथा- 'उत्कर्ष हेतवः प्रोक्ताः गुणालंकार रीतयः।'[16]

काव्यगत सभी सम्प्रदायों में रस के अस्तित्व को स्वीकार किया गया है। डॉ0 नगेन्द्र ने रस की अलैकिकता के संन्दर्भ में लिखा है 'यह विषयानन्द से भिन्न है यह अनुभव चिन्मय है, वह इन्द्रियों का विषय न होकर चैतन्य आत्मा का विषय है।'[17]

अतः यह स्पष्ट है कि काव्य में रस को प्रधान स्थान प्रदान किया गया है। 'रस एक विशेष परिस्थिति में उद्बुद्ध विविध भावों के सम्मिलित आनन्द के रूप में प्राप्त होता है। इस रस की अनुभूति के दो पक्ष हैं एक तो दृश्य पक्ष दूसरा रसानुभूति-दृश्य पक्ष का अनुभूतिगत परिणाम है।'[18] काव्य शास्त्रीयों ने गुण की दृष्टि से शान्त, बीभत्स, और अद्भुत को सतोगुणी, श्रृंगार, करुण और हास्य को रजोगुणी वीर भयानक और रौद्र को तमोगुणी रस माना है। शक्ति काव्यों में मुख्यतः शक्ति का ओजस्वी रूप में चित्रण हुआ है, काव्य भक्ति प्रधान होने के कारण स्त्रोत रस की धारा भी वही है। शक्ति काव्यों में मुख्यतः वीर रौद्र, श्रृंगार, भयानक, वात्सल्य रसों का परिपाक है। इसके अलावा अन्य रसों का प्रयोग भी हुआ है।

श्रृंगार रस- श्रृंगार-रस को रस राज माना गया है। क्योकि यह अत्यंत व्यापक रस है, इसमें सर्वाधिक संचारी भावों का समावेश रहता है। श्रृंगार के रस राजत्व के अन्य भी कई कारण हैं क्योकि इसमें चित्त की अन्य भी कई अवस्थाएँ आ जाती हैं। इसीलिए देव ने 'भूलि कहत नव रस सुकवि, सकल मूल श्रृंगार' कहा है। श्रृंगार के दो पक्ष हैं संयोग और वियोग। शक्ति काव्यों में दोनों पक्षों का प्रयोग हुआ है-

'सुना बइठ कै रंग माँ घूँघुर कै झनकार,
बदन निहारा चन्द्रमुखी के आँखि आँखि माँ डारि।'[19]

संयोग श्रृंगार का उदाहरण है-

'निज हनन से वा देवी कै लागिन करै सिंगार।
कोउ पहिराइ दिहिसि मंगन माँ, कोमल दिव्य दुनूल।
केउ बेनी गुहि दिहिसि तूरिकै, कलप लता कै फूल।।'[20]
शिवा जगदम्बा एक बार और बक्री बनी,
बक्रा बना पुरुष पुराना विश्वम्भर सा।'[21]

वियोग श्रृंगार- वियोग श्रृंगार कई स्थितियों में आता है इसकी दशा दशाएँ मानी गयी हैं। वियोग की स्थितियाँ पूर्व राग, मान और प्रवास हैं। प्राण-प्रिया के बिना नगर गाँव सब सूना लगता है-

'आजु उहै मुँह बिना निहारे, त्रिभुवन लागै सून।
प्रान-प्रिया के बिना न भावे, नगर न गाँव न गोंठ।।
पल्लव ताके पै आँखिनि माँ, नाचै लागै ओंठ।
धक् धक् धक् धक् बरै करेजा, रहि छाती घुघुवाति।
देह विरह में करिका हुइगै, न दिन वितै न राति।'[22]

'राम की शक्ति पूजा' में निराला ने राम की विरह व्यथा को इन शब्दों में अंकित किया है-

'धिक् जीवन जो पाता ही आया विरोध,
धिक् जीवन जिसके लिए सदा ही किया शोध।
जानकी हाय। उद्धार पिचा का होन सका।'[23]

करुण रस- शक्ति काव्यों में कई प्रसगों में करूण रस का परिपाक हुआ है-

'रोता न हिमाद्रि आर्द्र होते न कदापि
किंचित कृशानु शोक ओख पिघला नहीं।
अचित अनन्त जड़ सदा करूणा से हीन,
घोर दुख दोष में दिगन्त उबला नहीं।
शती शव अंक में विलोक नील लोहित के,
किन्तु कौन धीर जो अधीर विचला नहीं।
रोया शैल राज करुणार्द्र हुए विधि विष्णु,

रोहिताश्व शम्भु मोह खेद में जला नहीं।'[24]

विश्वसनीय बन्धु ने मुझे भगा दिया, मुझे अपार दुख हुआ सुरथ नृपति के वचनों में करूणा स्पष्ट झलकती है–

'विश्वसनीय जो बन्धु लोभ बश मोंहि भगायो।
ह्वै के हों अति दुखित, घोर बन में इत आयो।
मोइ पतो अब वहीं स्व जन सुत दारा कैसे।
सदावार व दुराचार, रत सुत मम जैसे।।'[25]

रौद्र रस– शत्रु की चेष्टाओं, अपना तिरस्कार या अपमान, अनचारकी घटनाओं के कारण रौद्र रस उत्पन्न होता है। रौद्र रस का स्थाई भाव क्रोध है। यह वीर रस का सहयोगी रस है। आलोच्य काव्य ग्रन्थों में रौद्र रस का पूर्ण परिपाक हुआ है, क्योंकि शक्ति असुरों के विनाश के लिए अवतार लेती है। युद्ध में सवद्ध शक्ति का प्रचण्ड रूप रौद्र रस का परिपाक करता है।

'कीयो परम प्रहार, चण्ड के केश पकरिकै,
असितें मस्तक काटि गिरायो दैत्य मारिके।
मरयो चण्ड कूँ निरखि, मुण्ड देवी पै द्रौर्यो,
देवी ने करि दोष मारि असि तिहि सिर फोरयो।[26]
तीखे सायक शक्ति करैं, वर्षा फरसनि की,
इत्तें माता लड़ै सेन उत सब असुरन की,
देवी बाहन सिंह, क्रोध में भर्यो भयंकर।
गर्जन करि गलकेश हिलावे समर वीरवर।'[27]
'गर्जा वीर भद्र अवलोक जगदीश्वर को,
और सर्वेश जगदीश हँसने लगे।
बोला भक्त। शिव द्रोही नहीं शिव भक्त हरि।
आये क्यो रण में? यह शिव कहने लगे।'[28]

युद्ध की भयंकर स्थिति को कविवर डॉ0 कुँवर चन्द्र प्रकाश सिंह शब्द रूप देते हुए कहते हैं–

'फाड़ कर तम का विराट् शून्य लोक वह,
धूप केतुओं का महालोक पलने लगा।
अवंर अवनि के अनन्त आकाश बीच,
मंदर सा वह तेज कूट चलने लगा।'[29]

सिंह का रौद्र रूप द्रष्टव्य है–

'कूदि सिंह चढ़िगा गज माथे,
बाहुँ युद्ध कीन्हा रिपु साथे।
पुनि हरि चामर महि पर आई,
नाना भौतिन किया लराई।
सिंह आकाश उड़ा महि आवा,
निज पंजन अरि सिर विनशावा,
धड़ से मुंड अलग हरि कीन्हा,
गिरा भयंकर दनु महि लीन्हा।।'[30]
'रोम रोम माँ तेज अनूप। लागै आँचि लखै पै रूप,
धनुष हाथ माँ तरकस पीठि। धक धक बरै लवरि अस दीठि।
करि माँ खड्ग कन्ध पै सूल, मुँह माँ लाल जपा कै फूल।
फुरित अधर-पुट दीरध साँसि। सर सै चुवै अगिनि कै रासिफ
छिपिगा कोमल रूप रसाल। उमा चंडिका भै त्तकाल।'[31]

रौद्र रस का सर्वमंगला से ही एक उदाहरण द्रष्टव्य है–

'छेंकि लिहिन इच्छा चारी - सुर, सिव का चारिउ ओर,
दसौ दिसा तब कांपन लागी, जय निनाद से घोर।
तब भृगुटी से कुपित रूद्र की, निकसा तेज अपार।
लक् लक् लक् लक् प्रकासि से व्याप्ति उठा संसार।'[32]

वीभत्स रस– वीभत्स का स्थायीभाव जुगुप्सा या घृणा है। इसका आलम्बन अरुचिकर, अप्रिय, अमंगलकारी और उद्वेगजनक वस्तु या दृश्य होता है। शक्ति काव्यों में युद्ध दृश्यों की बहुलता है अतएव वीभत्स रस का भी पूर्ण परिपाक हुआ है–

'कर करवाल केसरी वाहन
उर पर आर्द्र मुंड माला।
था अति भीषण रूप भयंकर
मानो देही तम काला।
लप लप जिहवा थी करती,
आँखे बरसाती थी ज्वाला
नाच रही थी साथ पिशाची,
पीकर उष्ण रुधिर हाला।।[33]
'कतहूँ गोड़ कटे घोड़न के, दुरद तन्त छितराने
झुण्ड-झुण्ड नरमुण्ड धारा पै, ककरि अस विथराने।।
केहुँनी कहूँ, कहूँ पै पंजा, कहूँ गोड़ कै एड़ी।
तन से निकसा अलग फफेड़ा, भुजा भई कटि गेड़ी।'[34]

वीभत्स का कितना उपायुक्त उदाहरण है –

'कुछ पै भिन भिन भिनकै माछी,
कुछ कै गलिगा हीरा।
फूलि फूलि कै बज बजायूँ कुछ,
बल बल रेगै कीरा।
केहुँनी नीचै चील्हि बइठि कै,
कौवा नाचै कन्धा,
झुन्ड-झुन्ड लेथिन पै टूटै।
कुकुर हवै के अन्धा।'[35]

वीर रस– आलोच्य काव्य परम्परा में वीर रस का सुन्दर परिपाक

हुआ है। महाशक्ति और आसुरी शक्तियों के युद्ध-दृश्यों में पराम्बा ने वीर भाव धारण किया है, उस अपूर्व उत्साह को कवियों ने अपने ढंग से व्यक्त किया है। भारतीय विवेचना के अनुसार वीर प्रधान रसों में से। मनोवैज्ञानिक रूप से इसके मूल में युयुत्सा अर्थात् युद्ध दृश्य प्रधान है, इसलिए आलोच्य काव्य में वीर रस का भी सुन्दर एवं कुशल प्रयोग हुआ है -

'रूद्र क्रोध वेर! बल विनम्र निधान वीर।
आगे बढ़ो होकर प्रकाम कहा हरि ने।
खींज मंजु शिन्जनी प्रचण्ड महा शारंग पे,
सावधान भद्र छवि धाम कहा हरि ने।'[36]

सर्वमंगला में वीर रस का पूर्ण परिपाक हुआ है -

'तब चण्डी भय भंजनि हारि, लिहीं पकरि कै सींग उखारि,
बाय उठी बन्दर अस खीसि, निकसै लाग असुर रद पीसि॥
तब चण्डी ले के करवाल। काटि लिहीं भूधर असभाल।
मरत महिस कै समर मंझारभा बैरिनि मा हाहाकार।
आपन अपन अस्त्र बहाय। भागि खोह माँ गये लुकाय।'[37]

छप्पय दुर्गा सप्तशती में भी युद्ध दश्यों का सजीव वर्णन है -

'देखि गदा अति तीक्ष्ण देवि ने तुरत निकारी।
गदा दैत्य की काटि, भूमि पै देवी डारी ॥
लिए शूल अरि हाथ शूल देवी हूँ धारयो।
सुर रिपु पुष्ट निकुभ शूल हिय ताकि मार्‍यो॥'[38]

'अम्बे' शीर्ष कविता में वीर रस का सुंदर प्रतिपादन हुआ है -

'उठ, लमक तान अंबे! त्रिशूल!
जीवन की यह जड़ता कराल,
यह जगत् वासना में बेहाल,
पापों की ज्वाला बीच भीष्म,
झलसा सा यह जीवन प्रवाल।
अघ कीट काटते विश्व मूल,
उठ तमक तान अंबे! त्रिशूल!
तू जननि आज उठ बेगि जाग,
दे लगा सृष्टि मे एक आग।
जल जाँय पाप वासना काम,
जागे कण-कण में प्रेम राग।
दे पाप हृदय में तीव्र हूल,
उठ तमक तान अंबे त्रिशूल॥'[39]

'विजया वाहन' में भी आधा शक्ति पराम्बा का कवि शत्रुनाश हेतु आह्वान करता है-

'कड़क-कड़क के कृपाण करमें करके,
ले करके शोणित चषक दौड़ती आ माँ।
मुख मोड़ती आ, मानियों का अभिमानियो का।
छल बलियों का छत बल तोड़ती आ माँ।
जोड़ती आ अंबर लौं अंबर का ओर छोर,
क्रान्ति का रंगीला आग राग छोड़ती आ माँ।
फोड़ती आग कपट-कटाह क्रूरों क्रोधियों का,
जगमग जागृति की ज्योति जोड़ती आ माँ।'[40]

भयानक रस- युद्ध के सजीव दृश्याँ तथा माँ के कराल-विकराल रूप के वर्णनों में प्रमुख रूप से भयानक रस का प्रयोग हुआ है। भयानक रस का स्थायी भाव भय है। इसका आलम्बन क्रूर स्वभाव वाले, हिंसा-प्रवण जीव तथा उग्र आचरण वाले व्यक्ति होते हैं। 'भयानक रंग कृष्ण या काले रंग का माना जाता है। भरतमुनि के अनुसार वीभत्स से, जो कि प्रधान रस है, भयानक की उत्पत्ति हुई है। इसका यही अर्थ किया जा सकता है कि वीभत्स अर्थात् अवांछनीय और अरुचिकर के दर्शन से, भयानक रस का संचार होता है। भयानक का स्थायी भाव जो भय है वह मनोवैज्ञानिक वृत्ति है और केवल मनुष्यों में ही नहीं बल्कि अन्य जीवों में भी पायी जाती है।'[41]

'है अमाँ निशा, उगलता गगन घन अन्धकार,
खो रहा दिशा का ज्ञान, स्तब्धा है पवन चार।'[42]

में भयानक रस का पूर्ण संचार हुआ है।

'देखा राम ने सती वैदही का विराट वेश।
पाहन के सेतु महासागर मे डालती॥
संस्थित करती, शिव सुमन सहित सैन्य।
स्वर्ण पुरी लंका को अनाथ सा उखाड़ती॥'[43]

सर्वमंगला से एक उदाहरण द्रष्टव्य है -

'ओढ़े खाल गजासुर कै जै अंग लपेटे व्याल,
तोपे बइठि चिता के ज्वाला, हाथ धरै कपाल।'
तमतमानि पहुँची झट गंगा, रुद्र उठे तत्काल,
हिमकर खसकि परा माथे से, टूटि मुंड के माल।'[44]

इसके साथ ही नाट्य शासत्र में भरतमुनि ने स्पष्ट लिखा है -

'स्वं स्वं निमित्तमा साद्य शांताद् भाचः प्रवर्तते।
पुनर्मित्तापाये चः शान्त एवोपलीयते॥

अर्थात् 'शान्त' से भाव प्रर्दुभव होते हैं और अपना उदेश्य पूरा करके उसी में समविष्ट हो जाते हैं। इसके साथ-साथ यदि रस ब्रह्मास्वाद सहोदर है। तो शान्त रस ही उसके निकट अधिक पहुँच सकता है। क्योंकि ब्रह्म की प्राप्ति भी निर्वेद और ज्ञान से प्राप्ति है। वह शान्तिदायक है।'[45] शक्ति काव्यों की सर्जना शान्ति

भावाउत्पन्न भक्ति धारा के कवियों द्वारा हुई है। शक्ति काव्यों का स्वर भक्ति भाव प्रथमत: उत्पन्न करता है, साहित्यिक भाव बाद में। अतएव यहाँ यह सिद्ध है कि शक्ति काव्य ग्रन्थों में शान्त रस की अजस्र धारा प्रवाहित हुई है-

'देवि तुम सब दुख हरिबे हारी,
शरनागत प्रतिपाल करो नित हो जग की महतारी
हवै प्रसनन विश्वेसरि माता सकल विश्व हितकारी
जगत् चराचर की तुम स्वामिनि विश्वेश्वरी कुमारी
एक मात्र आधार जगत् की तुम पृथिवी थितिकारी।
लंघनीय नहिं परम पराक्रम नीर रूप तनुधारी।।'[46]

'जहाँ नगरिया वा कासी की जा बिटिया! वहि देस,
उहाँ पहुँचि कै प्रलयंकर से मोर कहेऊ सन्देस।
तोहरे हाथ सैपि के जेकों निरधन भयउ महेस.
वहि गिरिजा के नवात राख कर काटौ मोरा क्लेस।
आशुतोष वे औढर दानी, कृपा सिन्धु त्रिपुरारि,
उनका छोड़ि जगत् माँ बेटी कोउ न सकै दुःख टारि।।'[47]

अद्भूत रस-

'फाड़ कर तम का विराट् शून्य लोक वह,
धूम केतुओं का महालोक पलने लगा।
अम्बर अवनि के अनन्त आकाश बीच,
मंदर सा वह तेजकूट चलने लगा।'[48]
तब भृकुटी से कुपित रुद्र की, निकसा तेज अपार।
लक् लक् लक् लक् प्रकास से कापि उठा संसार।।
वहि प्रकास माँ सब देवन कै तन कै जोति समान।
तैसे एक प्रकट भइ देवी दिव्य, रूप गुन, खानि'[49]

शान्त रस- भक्ति काव्य भक्ति भाव प्रधान है, प्राय: भक्त या संत कवियों द्वारा इसकी सर्जना हुई है यदि वह इस कोटि में नहीं आते तो देवी के आराधक हैं और इसी आराधना-भाव की पृष्ठभूमि पर आलोच्य काव्य परम्परा का सृजन हुआ है। शक्ति काव्य के रचनाकारों में माँ के प्रति आराधना भाव प्रबल रहा है।

'आचार्य अभिनव गुप्त ने शांत को एक मात्र रस माना है। शांत में 'शम' की स्थिति है। जिसमें चित्त समरस रहता है। इसमें एक प्रकार से चित्त निर्विकारत्व की स्थिति में है, क्योंकि वह लौकिक बन्धनों से मुक्त और शान्त होता है, जो आनन्द की अवस्था है।'[50]

'न है मोक्षाकांक्ष नहिं विभवकांक्षा हृदय में,
न विज्ञानपेक्षा शशिमुखि सुखेच्छा अब नहीं,
यही याचा मेरी निज तनय को रक्षित करो,
मृडानी रूद्राणी शिव शिव भवानी जपति जो।'[51]

आर्यवर दें। वर दे भर जाओ,
प्राणों में नव जीवन सार!
दीन देश के शून्य भवन में
आओ माँ बैठो साकार।।'[52]

इन उपर्युक्त पंक्तियों में निर्वेद भाव की प्रधानता है। यह पंक्तियाँ हृदय में भक्ति और शान्ति का संचार करती हैं।

वात्सल्य रस- वात्सल्य रस को संस्कृत के अधिकांश आचार्यों ने इसके रूप में स्वीकार नहीं किया। उन्होंने इसे भाव मात्र माना है। परन्तु आचार्य विश्वनाथ ने अपने साहित्य दर्पण में वात्सल्य के रसत्व की प्रतिष्ठा की है हिन्दी साहित्य के अन्तर्गत विशेष रूप से राम काव्य और कृष्ण काव्य में तुलसी और सूर जैसे कवियों ने वात्सल्य का बड़ा सुन्दर वर्णन किया है इसलिए हिन्दी काव्य में वात्सल्य रस को बराबर स्वीकार किया गया है। शक्ति काव्यों में मात्र शक्ति का आख्यान प्रस्तुत किया गया है। कविगण-जगदम्बा का गौरवगान कर नतशिर हो जाते हैं।

'जब तेरे भरोसे पड़े हैं यहाँ,
तब कैसे हमें न उबारोगी माँ।
कवि-विष्णु हमें तो भरोसा यही,
है कभी न कभी तुम तारोगी माँ।'[53]
'कोऊ मातु तोको जगती निधान भूत मानि,
मूल प्रकृति के नाम तें ही रहैं जानते।'

कहकर कवि माँ की कृपा की आकांक्षा चाहता है। इन पंक्तियों में वत्सल भाव स्पष्ट झलकता है।

'लउटै पै दुनिया से परछब, सिर माथे पै लेब,
अपने दुधावा से हम बेटी। तुहइँ उरिन कइ देब।।'[54]
'भूईँ-माता गिरिराज पयोधर, भारत बाल दुलारा,
गगा-जमुना-सिंधु-ब्रह्मनद, फूटि दध कै धारा।'[55]

'माता की चरण रेणु मेरी परम शक्ति है,' निराला ही इन पंक्तियों में वात्सल्य भाव अपने समग्र रूप से विराजमान है। माता तो कुपुत्रों पर भी दयार्द्र हो जाती है।

'पनाहे दामने दौलत में, गर्दिश में फलक आया।
बजोशे मादरी मादर ने, लुत्फ उस पर भी फरमाया।'[56]

आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी का भी यही भाव है और उनके काव्य का यही मूल स्वर है -

'पीयूष पूर्ण दृग तू जननी हमारी,
संताप तप्तन बालक में दुखारी।
संवध सत्य अस मातु हिए विचारी,

कीजै यथा उचित देवि हमैं बिहारी।'[57]

2.**अलंकार विधान**- 'संस्कृत साहित्य में अलंकार दो रूपों में प्रकट हुआ है। एक तो भामह दण्डी आदि आचार्यों के द्वारा अलंकार को काव्य की समग्र शोभा के रूप में देखा गया और वामन द्वारा उसे काव्य सौन्दर्य के रूप में प्रतिष्ठित किया गया। दूसरे उसे गुण की तुलना में गौण स्थान दिया गया और कहा गया कि अलंकार तो काव्य की शोभा बढ़ाने वाली विशेषताएँ हैं। शोभा के सम्पादक मूल धर्म नहीं।[58]

अलंकार मूल प्रकृति और प्रक्रिया के आधार पर खण्डों में विभाजित किये जा सकते हैं। इसमें प्रधानतया दो वर्ग देखा जा सकते हैं एक तो एक वर्ग ऐसा है जो शब्द-शब्द द्वारा रूपायित करने या सम्वेद्य बनाने वालें अलंकार और दूसरे अर्थ द्वारा रूपायित या संवेद्य बनाने वाले अलंकार प्रथम वर्ग को शब्दालंकार द्वारा तथा दूसरे को अर्थालंकार द्वारा व्यक्त किया जा सकता है। प्रमुख अलकारों के आधार पर शक्ति काव्यों की समीक्षा की गई है।

शब्दालंकार- कुछ विशेष वर्णों, शब्दों एवं वाक्यों के प्रयोग से काव्य में चमत्कार उत्पन्न होने पर शब्दालंकार होता है। यदि प्रयुक्त शब्दों के स्थान पर पर्यायवाची रख दिये जाये, तो शब्दालंकार नहीं रहता है। इनका सम्बन्ध भाषा के बाह्य रूप से होता है। लय और धवन्यात्मकता को बढ़ाने के लिए काव्य में अलंकारों का प्रयोग होता है -

'कड़क-कड़क कृपाण करमें करके,
ले करके शोणित चषक दौड़ती आ माँ।
मुख मोड़ती आ मानियों अभिमानियों का,
छल बलियों का छल बल तोड़ी आ माँ!
जोड़ती आअंबर लौ अंबर का ओर छोर,
क्रान्ति का रंगीला आग राग छोड़ती आ माँ।'[59]

उपर्युक्त पंक्तियों में 'क' की आवृत्ति अनेक बार होने से अनुप्रास अलंकार है। इस प्रकार-

'केश पकरि के कछुन कछू को गरो दबाये।'

इसमें भी 'क' की आवृत्ति होने से अनुप्रास अलंकार है-

'चपला चमकी चारिउ ओर। गड़-गड़-गड़ गरजे घरघोर।
हर-हर-हर-हर लेति झपेड़। झंझा चली उखारीति पेड़।
चारिउ और मचा उत्पात। कड़ कड़ कड़ कड़ भा परिपात।
लप लप लप लपकै कृपान, पीकै सोबित उगिलै निदान।
चम चमचमकै तिरसूल लाल। मानो भुखान विकराल व्याल।'[60]

उपर्युक्त पंक्तियों में अनुप्रास की अद्भूत छटा है। जहाँ पर शब्द की भिन्न-भिन्न शब्दों में आवृत्ति होती है वहाँ यमक अलंकार होता है। इसके संभग पद-अभंद पद भेद किये जाते हैं। देखिये उदाहरण-

काम पे कटाक्ष-काम, काम-कामिनी ने किया,
काम सधान्वा की काम, काम ने तरेद दी।'[61]

यहाँ पर काम के भिन्नार्थ हैं। निम्न पंक्ति में 'धारा' की आवृत्ति कई बार हुई है।

'कूर्म पर शेष, भोग पे धरा है धरी
धरी धरती पर, धराधर के सानु हिमवान धरा।

अर्थालंकार- जहाँ हम वस्तु भाव विचार और चरित्र शब्दों के चमत्कार से नहीं अपितु अर्थ के चमत्कार से रूपायित करते हैं।

उपमा अलंकार- जहाँ उपमेय और उपमान के बीच गुण सादृश्य प्रकट किया जाये उपमा अलंकार होता है।

'शशि सा शील प्रताप अनल सा रवि सा तेज अपार।'[62]

पी पी रक्त खा खा के असुरों के चय,
रण भूमि उसने बना दी पितृ बन सी।
दिग दिग्गजों के घहराते थे दुःखों के घन,
शीश पर विपत्ति विराजी बिजली सी थी।'[63]

'अंब तेरे चरण हुए हैं उपमा से हीन,
जन सुति सेवी से, मिले हैं बड़ी खोज से।
बालक-अधर अवदात से अनूप अति
लसते घिरे हैं, निज निकट पयोज से।
प्रणत जनों के प्राप्ति, काम के जनक यह,
छवि दे रहे हैं, मुक्त मण्डित उरोज से।'[64]

उत्प्रेक्षा- जहाँ उपमेय में उपमान का समाहार या अवसान हो जाता है उत्प्रेक्षा अलंकार होता है।

'कर करवालकेसरी वाहन,
उर पर आर्द्र मुण्ड-माला।
या अति भीषण रूप भयंकर
मानो देही तम काला।'[65]

'सानु पे विराज मान चण्ड मुण्ड माली हैं।'[66]

कौन है जो देव आशुतोष को करे सन्तोष'[67]

'घट घट वासी अमरों की घटगति जान।'[68]

आदि उपर्युक्त पंक्तियों में शब्द की अनेक बार आवृत्ति होने पर भी अर्थ अलग-अलग निकलते हैं-

'मैं अवेद वेद मैं ही अनजा अजा हूँ मैं ही।'[69]

'किरिनि परे चमकै हथियार,
मानों प्रगटे सुरूज हजार।'[70]

'मानों कल्पान्त का विशेष प्रलय अंश सिन्धु
हंस मति मेरूखण्ड दण्ड से मथा गया।'[71]
'घोर अग्नि माला में विदग्ध रोदसी का भाग,
दिव्य आयुधों से इस भाँति जला जाता था।
मानों आदि देवों के करों से महायुद्ध मिस,
माया के तवा पे सृष्टि पिण्ड तला जाता था।'[72]

रूपक अलांकार- जहाँ उपमेय और उपमान में एक रूपता हो वहाँ रूपक होता है। रूपक अलंकारों का शक्ति काव्यों में प्रचुर प्रयोग किया गया है। राम की शक्ति पूजा में सम्पूर्ण रूपक बाँधा गया है।

परम पद से पहुँची है, सूक्ष्म रूप नाड़िका जो,
सुषुम्णा है नाम ताको सुन्दरी समझिए।
चन्द्र सूर्य योग से उसी के साथ संग करि।
सुन्दर सब भूषण ले श्यामा को सजिए।'[73]
विपक्ष सतारक विशाल व्योम मण्डल है,
ग्रस्त तम में है, ज्योति तत्त्व छविमान भी,
गौर शशि-रश्मि कृत दिशि-देवियाँ है नग्न,
अच्युत धुरी पे हैं, धारित्री कम्पमान थी।
हँस-कुल-कमल कलाप हो चुका है दग्ध,
ओस स्वेद बिन्दु, मिस रोता आसमान थी।[74]
'कनक सुमन बन्धूक पीत अरु अरुन सुमिश्रत।
शोभतनकी परम मनोहर कविवर वरनत॥
अक्षमाल अंकुश सुधा, पाश वरद मुद्रा परम।
आभूषन है अर्थ शशि, तीन नेत्र सब शरन हम।'[75]
मेरी है जो सहस्रार, पद्य रूपी भोजन में,
बनी है जो चन्द्र की, कला सुधा के सब से,
तोष दामिनी करै त्रिलोक के अशोक ऐसी,
पान योग्य सुरा है छुड़ावे काल रव से।'[76]
इन पंक्तियों की सुन्दर छटा बनी है।

सन्देहालंकार-
सन्देह उत्पक होकर पुष्ट न हो,
'की गरजै परलय घनघोर,
की संवर्त-सिन्धु कै शेर।
की रवि चन्द्र गये टकराय,
की ब्रह्माण्ड परा भयराय।'[77]
देवी तु ही है परम पुरुष या,
अतुल अनन्त वीर्य पुरुषार्थ।
शक्ति रूप है, शद्रि मान या,
प्रेम स्वार्थ या तू परमार्थ।'[78]

विरोधाभास- जहाँ पर वास्तविक विरोध क्रिया या पदार्थ में न होते हुए विरोधा दिखायी पड़े-

'कैसा सुन्दर कैसा भीषण था देवी का रूप
इधर अमृत की चारू चन्द्रिका उधर प्रलय की धूप।'[79]
'कैसा वैपरीत्य हम होते हुए भी शक्त
सर्वथानिः शक्त आज भारत में हो गये।'

अतिशयोक्ति- प्रायः युद्ध वर्णनों में अतिशयोक्ति का प्रयोग हुआ है-

'मज्जा' माँसु मेद, माटी औ नर सोणित माँ सानी,
भरता भई लोधि अन गिनतिनि वैन परै पहिचानी,
भा गजराजन के गोड़न माँ, रुधिर जामि कै थाका।
लाल लाल विकराल समर थल ढीथि के न जाये ताका।'[80]
'फाड़ कर तम का विराट् शून्य लोक वह,
धूमकेतुओं का महालोक पलने लगा।'[81]

इन्हीं प्रमुख अलंकारों का प्रयोग रूप से किया गया है।

3. **शब्द शक्ति, गुण वृत्ति तथा भाषा की दृष्टि से अध्ययन-**

1. **शब्द शक्ति की दृष्टि से**- शब्द शक्तियाँ तीन होती हैं, अभिध, लक्षण, व्यंजन। अभिध वहाँ होती है जहाँ कोषगत अर्थ होता है। लक्षण वहाँ होती है जहाँ मुख्यार्थ में बाधा होने पर रूढ़ि या प्रयोजन अभीष्ट हो। व्यंजन विशेष रूप से अर्थ को स्पष्ट या व्यंजित करने वाली शक्ति है। अतएव अर्थबोधन की प्रक्रिया 3 प्रकार की हुई। अभिध का प्रयोग देखिये-

'नृप पूछें तुम कैंन? कहाँ ते आये दुखित,
बाल्या वैश्य विलीत, नमन करि सुनु है नरपति
राजन हो हूँ वैश्य धनिक कुल माँही जायो।
मेरा नाम समाधि दुखित हुइ आश्रम आया।'[82]

इसके शब्दार्थ से अर्थ स्पष्ट हो जाता है। व्यंजना का प्रयोग देखिये-

'निज अभिव्यक्ति व्यक्त होते न सती से देख,
शिव ने कहा हे सर्व बल्लभा तपस्विनी,
श्रद्धा, श्रुति शक्ति की स्वरूपा मूर्ति रूप,
मेरी भार्या प्रिय बनो। तुम दक्ष शक्ति नंदिनी।'[83]

यहाँ पर व्यंजन शक्ति के द्वारा माँ की महाशक्ति रूप स्पष्ट हो जाता है। शक्ति काव्यों में माधुर्य, ओज, प्रसाद आदि सभी गुणों का प्रयोग शक्ति काव्यों में हुआ है। माँ शक्ति का रूप वर्णन आज, प्रसाद, माधुर्य तीन गुणों से परिपूर्ण है।

माधुर्य गुण का रूप द्रष्टव्य है-

'शिशु जगदम्बा सित पक्ष चन्द्र के समान,
सकल कला में वय वद्ध बढ़ती रही।
शरवेन्दु अर्चि तुल्य सती नभ मानस में।
नाभ अनुरक्ति सानुराग चढ़ती रही।'[84]
'जननि निखिल लोक रक्षिका सदैव तू ही,
सर्व सुख दायिका निगूढ़ करूणा झरी।'[85]
ललित ललाम शोभा वलित प्रवालपुंज,
जाकर छिपा है, या पयोधि गुफा गहरी।'[86]

प्रसाद गुण का भी शक्ति काव्यों में पर्याप्त हुआ है। आधा शक्ति कोमल रूप का वर्णन इस गुण के अन्तर्गत आता है-

'न मद में मादकता का नाम ,
न तन में अतन ताप का लेश,
रूप जिसका है, लोक ललाम,
अवनि रंजन है जिसका वेश।'[87]

महामाया रूप के वर्णन में प्रसाद का गुण का प्रयोग देखिये-

'महामाया परम विशदे, शक्ति अमल।
रमा रम्ये शान्ते सरल हृदय देवि। कमले।'[88]

ओज गुण के अनेक उदाहरण शक्ति काव्यों में द्रष्टव्य हैं-

'जो धुक कैलाश पै शत्रु ध्वजा फहराये।
जौ धुक आपुन मान सरोवर अपने हाथ न आये,
जौ धुक रिपु से छोरि न लेव्या तू गिरीश कै श्रेनी,
ना गोड़न माँ देब महावर, तौ धुक गुहब न बेनी।'[89]
प्रबल प्रचण्ड सा वखंड प्रलयंकर सा,
शंकर सा सृष्टि को विभास करता हुआ।
थर थर थर गिरिराज को हिलाता हुआ,
भीमकर भौम सा विकास करता हुआ।'[90]
'ध्वज गिरै कहुँ पै गिरै दण्ड,
रथ परै कहू पै खण्ड खण्ड
केरा अस कटि कटि गिरै वीर,
उछरै पटकै लोटै शरीर।'[91]

शक्ति काव्यों में इन गुणों की व्यापक सृष्टि हुई है।

भाषा की दृष्टि से अध्ययन- शक्ति काव्यों की भाषा युगानुरूप परिवर्तित होती रही है। जहाँ भक्ति काल के शक्ति काव्यों की भाषा बृज भाषा रही वही आधुनिक युग में अवधी, लोक भाषा तथा खड़ी बोली, उर्दू, संस्कृतनिष्ठ बोली तथा ब्रज भाषा प्रयोग हुआ है। चण्डी चरित्र-गुरू गोविन्द सिंह की भाषा का उदाहरण देखिये-

'असुर संहारन अनिक दुख नाशन,
सु पत्ति उबारन छुड़ाये जम जारन हैं।
देवी वर लायक, सुबधा हूँ की दायक,
सु देहि बर पायक, बनावै ग्रन्थ हाल है।'[92]

देवकृत भवानी विलास की भाषा ब्रज है। आधुनिक काल के प्रमुख कवियों में ब्रज, अवधी तथा खड़ी बोली का पर्याप्त प्रचलन हुआ है। हरिऔधा ने-

'सकल भाँति हमें अब अम्बिके,
चरण पंकज ही अवलम्ब है,
शरण जो न यहाँ जन मिली
जननि तो जगत्ी तक शून्य है।

संस्कृतनिष्ठ खड़ी बोली का प्रयोग किया है।

लाल शंकर दयाल 'खुश्तर' ने उर्दू में शक्ति चालीसी लिखकर एक अनूठा आयाम कायम किया-

'नफीसों में नफासत है, मरगवों में मरगवी,
शरीफों में शराफत है, महबूबो में महबूबी।'[93]

आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी ने शुद्ध खड़ी बोली स्तुति शतक की रचना की-

सप्रेम पूजि जिनको नर प्रेम धारी,
पावे कवीन्द्र पद पावन कीर्तिकारी
नावें नृदेव जिन पायन पै स्वमाथा
दण्ड प्रणाम जिनको मम जोरि हाथा।'[94]

मैथिलीशरण गुप्त के 'शक्ति' की भाषा भी खड़ी बोली है-

'माँ के पीत पयोधर युग थे,
बूंद-सुधा परिपूर्ण
और अग्नि तेजोमय उनके,
दृग थे विषम विचूर्ण।'[95]

राम की शक्ति पूजा की भाषा शुद्ध संस्कृतनिष्ठ खड़ी बोली है।

'देखो बन्धुवर सामने स्थित जो वह भूधर,
शोभित शत-हरित-गुल्म तृण से श्यामल सुन्दर,
पार्वती कल्पना है इसकी मकरन्द-बिन्दु,
गरजता चरण-प्रान्त पर सिंह व नहीं सिन्धु।'[96]

विश्वनाथ पाठक की सर्वमंगला अवधी-कृति है। इसे अवधी का प्रथम शक्ति काव्य माना गया है उदाहरण देखिये-

'बेकर दूनो आँखि फूटि गै वोकर कंन अगन्त,
जेकर डारि झुरानि शिशिर माँ वोकर कौन बसन्त
वहि सितार कै कवनि रागिनी जेकर टूटा तार,

जेकर निनियाँ कुंभकरन अस, वोकर केस भिनसार।'[97]
'शर्वाणी' की भाषा शुद्ध संस्कृत निष्ठ है-
'दग्धा रति को सजीव करने के लिए,
अपने कटाक्ष में अमृत रस साजती।
क्षीर तुल्य श्वेत मुसकान की उषा से नित्य,
सज्जित उरोज गिरि गरिमा विराजती।'[98]

विजया भी खड़ी बोली का शक्ति काव्य है-

'शस्त्र शास्त्र पर था उनका अवाध अधिकार।
शशि सा सील, प्रताप अनल सा रवि सा तेज अपार।'[99]

शक्ति काव्य के भाषिक दृष्टि से विहंगम अध्ययन से यह पता चलता है कि शक्ति काव्यों की भाषा युग और काल के अनुरूप परिवर्तित हुई प्राय: जिस भाषा की और कवियों ने पकड़ी उसमें उनकी अच्छी पकड़ रही। वह उसी भाषा में सृष्टि का सम्पूर्ण संवेग के साथ वर्णन करने में सफल रहे।

(ख) शक्ति काव्य का युगानुरूप चित्रण की दृष्टि से विकासात्मक अध्ययन-

वैदिक साहित्य से चली आ रही शक्ति भावना ने हिन्दी साहित्य के आदिकाल में अपने आधार को दृढ़ता प्रदान की। आदिकालीन कवियों की शक्ति भावना साधन परक रही। त्तकालीन समाजशक्ति के साधन रूप प्रचलन थी। शक्ति का तान्त्रिक भाव इसी युग का प्रमुख भाव रहा। सिद्धों ने डोम्बिनी डाकिनी शक्ति को साधना की पृष्ठीाभूमि में रखा। सिद्धों ने सहज साधना का महत्त्व प्रतिपादित किया। नाथपंथियों की शक्ति भावना का विकास भी साधना परक रहा। तांत्रिकों का कौल मार्ग तथ्यगत कापालिक मत भी नाथ सम्प्रदाय को आधार मानता है। नागपंथियों की शक्ति भावना योग भावना से संयुक्त है। आदिकाल में चन्दवरदाई ने शक्ति के दुर्गा पंथी स्तुति राष्ट्र त्राण हेतु की।

मध्ययुगीन शक्ति भावना प्रमुखत: सीता और राधा रूप में विकसित हुई। सीता का मर्यादावादी स्वरूप रहा, वहीं राधा का आह्लादकारी रूप प्रत्यक्ष हुआ। स्फुट रूप से दुर्गा को आधार बनाकर चण्डी चरित्रों की रचना की गयी। विद्यापति ने दुर्गा के कराल रूप की अभिव्यंजना की। रीति काल में गुरू गोविन्द सिंह चण्डी चरित्र की रचना कर राष्ट्रशक्ति का आह्वान, विदेशी आक्रान्ताओं से मुक्ति के लिए किया। इसी कालखण्ड में 'राधा सुधा शतक' तथा देवकृत भावानी विलास की रचना हुई।

आधुनिक काल तक आते-आते शक्ति काव्यों का स्पष्ट स्वरूप सामने आया। आधुनिक कालीन शक्ति काव्यों में राष्ट्र शक्ति, लोक शक्ति का आह्वान किया गया। शक्ति का दुष्ट निकंदिनी के रूप में स्मरण किया गया। आधुनिक युग की राधा शक्ति समाजोद्धार समाज सेवा के निमित्त सन्नद्ध दिखायी पड़ती है। आधुनिक शक्ति काव्यों की दुर्गा रण चण्डी बन राष्ट्र की मुक्ति का स्वर संधान करती दिखलायी पड़ती है। गुप्त जी ने 'जय शम्भू निशुम्भमर्दिनी बनती काम कला कंदर्पिनी कहकर 'शक्ति का आह्वान भ्रष्टाचारियों एवं आत्ताइयों के समूल विनाश के लिए किया। इस कालखण्ड में मातृशक्ति का भी स्वरूप सामने आया। आधुनिक काल में हरिऔध, गुप्त, निराला आदि की शक्ति भावना ने अलग-अलग आयाम विकसित किए। हरिऔध की शक्ति लोकसेविका है, गुप्त की शक्ति राष्ट्र रक्षिका है वहीं निराला की शक्ति सत्य रक्षिका है। आधुनिक युगीन शक्ति काव्यों में भी सप्तशती को कथानक बनाकर लिखे गये शकित काव्यों का स्वर भक्ति प्रधान रहा, वहीं अलग आधार भूमि वाले शक्ति काव्य-यथा-सर्वाणी, सर्वमंगला, महाभारतीया, विजया, दुर्गा विजय आदि में आधा-शक्ति का लोक मंगलकारी रूप स्पष्ट हुआ। संक्षिप्त: शकित-कर्त्तव्यों की भाव दृष्टि का यही विकास क्रम है।

कालपुरुष

शक्ति है सूर्य शक्ति ही सूर,
शक्ति ही करती है भय दूर।
शक्ति शंकर के कर का शूल,
शक्ति जननी जीवन युग शूल॥

सन्दर्भ सूचीः-

1. सर्वमंगला- विश्वनाथ पाठक - मंगलाचरण से
2. वही- मंगलाचरण से
3. सर्वमंगला- वि.ना.पा.- पृ.- 7
4. छप्पय दुर्गा सप्तशती- प्रभुदत्त ब्रह्मचारी, पृ.-43
5. श्री दुर्गा पाठ ाषा - राम गुलाम कंशल - पृ.-31
6. शक्ति- मैथिलीशरण गुप्त- पृ.-11
7. शक्ति मैथिलीशरण गुप्त- पृ.-32
8. स्वरूप शद्रि सीता सुधा- दोहा- 15-16
9. कल्याण शक्ति अंक- पृ.- 445
10. कल्याण शक्ति अंक - पृ.-372
11. शर्वाणी- अनूप शर्मा- पृ.-17
12. विजय- कुँ.च.प्र. सिंह- पृ.-7
13. देवी स्तुति शतक- महावीर प्रसाद द्विवेदी - क.श. अंक- पृ.-29
14. सर्व मंगला - विश्वनाथ पाठक - पृ.-11
15. श्री दुर्गा पाठ भाषा - राम गुलाम कंशल-पृ.-15
16. साहित्यदर्पण -पृ.- 642
17. रस सिद्धान्त - डॉ0 नगेन्द्र -पृ.- 89
18. काव्य मनीष- डॉ0 भगीरथ मिश्र -पृ.-305
19. सर्व मंगला- विश्वनाथ पाठक - पृ.-44
20. सर्वमंगला- विश्वनाथ पाठक- पृ.-67
21. हर हर महादेव सती खण्ड- राम प्रसाद सर्राफ- पृ.-90
22. सर्व मंगला - विश्वम्भर नाथ पाठक- पृ.-7
23. राम की शक्ति पूजा -निराला
24. हर-हर महादेव - राम प्रसाद सराफ - पृ.-205
25. छप्पय दुर्गा सप्तशती- प्रभुदत्त ब्रह्मचारी- पृ.-19
26. छप्पय दुर्गा सप्तशती- प्रभुदत्त ब्रह्मचारी- पृ.-59
27. वही- पृ.-55
28. हर हर महादेव -राम प्रसाद सराफ- पृ.-189
29. विजय- डॉ0 कुँवर चन्द्र प्रकाश सिंह- पृ.-9
30. दुर्गा पाठ भाषा-श्री राम गुलाम कौशल- पृ.-39
31. सर्वमंगला- विश्वनाथ पाठक - पृ.-81
32. वही- पृ.-67
33. महास्वप्न कल्याण शक्ति अंक - पृ.-591
34. सर्वमंगला - विश्वनाथ पाठक- पृ.-107
35. वही- पृ.-109
36. हर हर महादेव- राम प्रसाद सर्राफ- पृ.-189
37. सर्वमंगला- पृ.-105
38. छप्पय दुर्गा सप्तशती- प्रभुदत्त ब्रह्मचारी- पृ.-70
39. कल्याण शक्ति अंक - पृ.-382
40. कल्याण शक्ति उपासना अंक - पृ.-221
41. काव्य मनीषा -भगीरथ मिश्र - पृ.-319
42. राम की शक्ति पूजा- निराला- पृ.-
43. हर हर महादेव सतीखण्ड राम प्रसाद सराफ- पृ.-124
44. सर्व मंगला - पृ.-57
45. काव्य मनीषा- डॉ वगीरथ मिश्र- पृ.-218
46. छप्पय दुर्गा सप्तशती- प्रभुदत्त ब्रह्मचारी- पृ.-75
47. सर्वमंगला - पृ.-35
48. विजया - डॉ0 कुँवर चन्द्र सिंह - पृ.-12
49. सर्वमंगला - वि.ना. पाठक - पृ.-67
50. काव्य मनीषा- भगीरथ मिश्र- पृ.-311
51. देव्य पराधा क्षमापन स्तोत्र- कल्याण शक्ति अंक- पृ.-39
52. महास्वप्न- रूप नारायण त्रिपाठी मृदु, कल्याण शक्ति अंक- पृ.-59
53. 'माँ' शीर्षक कविता - कवि विष्णु कल्याण शक्ति अंक- पृ.-378
54. सर्वमंगला - विश्वनाथ पाठक- पृ.-37
55. वही- पृ.-51
56. शक्ति चालीसी - कल्याण शक्ति अंक- पृ.-701
57. देवी स्तुति शतक - आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी। क.श.अ. पृ.-29
58. काव्य मनीषा - डॉ0. भी. मिश्र- पृ.-212
59. विजया वाहन - कल्याण शक्ति उपासना अंक पृ.-221
60. सर्व मंगला - विश्वनाथ पाठक - पृ.-91
61. हर हर महादेव - सतीखण्ड राम प्रसाद सर्राफ- पृ.-18
62. विजया- कुँवर चन्द्र प्रकाश सिंह- पृ.-1
63. हर हर महादेव सतीखण्ड - राम प्रसाद सर्राफ - पृ.-27
64. सर्वाणी- अनूप शर्मा।
65. महास्वप्न - कल्याण शक्ति अंक - पृ.-591
66. हर हर महादेव सतीखण्ड राम प्रसाद सराफ- पृ.-32
67. वही- पृ.-50
68. वही- पृ.-75
69. वही- पृ.-66
70. सर्वमंगला - विश्वनाथ पाठक - पृ.-83
71. हर हर महादेव - पृ.-3
72. वही- पृ.-5
73. पंचमकार- कल्याण शक्ति अंक -पृ.-255
74. हर हर महादेव सतीखण्ड राम प्रसाद सर्राफ- पृ.-1
75. छप्पय दुर्गा सप्तशती - पृ.-67
76. पंचमकार साधना कल्याण शक्ति अंक- पृ.-255
77. सर्वमंगला- पृ.-82
78. अनिर्वचनीय शक्ति कल्याण शक्ति अंक- पृ.-372
79. शक्ति- मैथिलीशरण गुप्त- पृ.-32
80. सर्वमंगला -पृ.-104
81. विजया - पृ.-12
82. छप्पय दुर्गा सप्तशती- पृ.-19
83. छप्पय दुर्गा सप्तशती- पृ.-19
84. हर हर महादेव। सतीखण्ड। राम प्रसाद सराफ- पृ.-
85. शर्वाणी - पृ.-17
86. वही- पृ.-34
87. श्री देव्यपराध क्षमापन स्त्रोत क.श. अंक- छन्द सं.- 12
88. कोमलतम शक्ति 'हरिऔध'- क. श. अंक - पृ.-88
89. सर्वमंगला - विश्वनाथ पाठक - पृ.-52
90. हर-हर महादेव- सती खण्ड- राम प्रसाद सर्राफ- पृ.-175
91. सर्वमंगला- विश्वनाथ पाठक - पृ.-86
92. दशम ग्रन्थ - गुरु गोविन्द सिंह छक्के पाव, शाही - पृ.-10
93. शक्ति चालीसी- शंकर दयाल 'खुश्तर' कल्याण- पृ.- 700
94. देवी स्तुति शतक - क. श. अं. - पृ.-29
95. शक्ति - पृ.-32
96. राम की शक्ति पूजा- निराला
97. सर्वमंगला - विश्वनाथ पाठक- पृ.-2
98. शर्वाणी- अनूप शर्मा- पृ.-2
99. विजया - कुँवर चन्द्र प्रकाश सिंह- पृ.-5

◆◆◆